Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XIV, Issue No. 1, October-2017, ISSN 2230-7540

सांख्य दर्शन में ईश्वर की अवधारणा

Dr. Sarita Kumari*

सार – *'ईश्वर' शब्द सुनते ही हमारे मन में यह विचारधारा आती है कि इस जगत को बनाने वाला, पालन करने वाला, पाप - पुण्य कर्मों का फल देने वाला, जीवों पर अनुग्रहादि करने वाला, सर्वैश्वर्यशाली, अनादि, मुक्त सर्वशक्तिसम्पन्न, अनन्त आनन्द में तीन, व्यापक तथा चैतन्यगुण युक्त एक प्रभु है जिसकी इच्छा के बिना जगत का एक पत्ता भी नहीं हिल सकता। ऐसा ईश्वर भारतीय दर्शन में केवल न्याय दर्शन ही स्वीकार करना है। अन्य भारतीय दर्शनिक की मान्यता कुछ भिन्न है जिन्होंने ईश्वर को स्वीकार किया है। वेदान्त दर्शन में नित्य, अनादि, अनन्त तथा शुद्ध सच्चिदानन्द स्वरूप एकमात्र निर्गुण ब्रह्म तत्त्व को स्वीकार किया गया है। इसके अतिरिक्त समस्त जगत इसी का विवर्त है। अर्थात् समस्त जगत में एकमात्र ब्रह्म तत्त्व है। पर जब मायोपाधि से युक्त होकर सगुणरूप को धारण करता है तब वह न्याय दर्शन के ईश्वर के तुल्य हो जाता है। न्याय दर्शन का ईश्वर तो मात्र निमित्त कारण है जबकि वेदान्त का सगुण ब्रह्मरूप ईश्वर जगत का निमित्त तथा उपादान दोनों कारण है। न्याय की दृष्टि से जगत वास्तविक है जबकि वेदान्त की दृष्टि से जगत भ्रमात्मक है। इस तरह, वेदान्त की दृष्टि से पर ब्रह्म ही सत्य है और उस पर ब्रह्म का मायारूप ईश्वर है, जो परम सत्य नहीं है।*

योग दर्शन सांख्य दर्शन का पूरक दर्शन है। इसमें प्रकृति और पुरूष दो मुख्य तत्त्व माने गये हैं। पुरूष संख्या में अनेक हैं। एक पुरूष - विशेष को ईश्वर कहा गया है जो अनादि, मुक्त, क्लेशादि से परे, कर्मों के फलोपभोग तथा नाना प्रकार के संस्कारों से सर्वथा मुक्त है। वह प्राणियों पर अनुग्रहादि करता है। अतः इस दर्शन का ईश्वर एक पुरूष विशेष है और वह सत्य रूप है।

----------X----------

सांख्य निरीश्वरवाद

सांख्य दर्शन मूलतः निरीश्वर वादी माना जाता है क्योंकि इस दर्शन में प्रकृति और पुरूष - ये दो ही तत्त्व माने गए हैं। प्रकृति और पुरूष का संयोग होने पर प्रकृति गुणों में क्षोभ होता है और तत्पश्चात् महदादिक्रम से प्रकृति से इस जगत की उत्पत्ति होती है। इसमें ईश्वर (पुरूष विशेष) की कोई आवश्यकता नहीं है। दृष्टि चाभाविक प्रक्रिया है। सांख्य दर्शन के उपलब्ध सर्व प्राचीन ग्रन्थ सांख्यकारिका तथा उसकी सभी प्राचीन टीकाओं में कहीं भी ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार नहीं किया गया है। गौड़पाद भाष्य आदि टीकाओं में भी सृष्टिकर्त्ता ईश्वर के अस्तित्व का खण्डन अवश्य मिलता है। सांख्यकारिका की प्रसिद्ध टीका युक्तिदीपिका में भी स्पष्ट शब्दों में प्रकृति की प्रवृति में ईश्वर प्रेरणा का निषेध किया गया है। गौड़पादकार भी ईश्वर को सृष्टि का कारण मानने के मत को अस्वीकार करते हुए कहते हैं कि ईश्वर जब निर्गुण है तो उससे सत्वादि गुणों वाली सगुण प्रजा की सृष्टि कैसे हो सकती है ? वाचस्पति मिश्र का कहना है कि जगत की सृष्टि या तो स्वार्थवश संभव है या करूणावश। ईश्वर जब अप्राप्त काम है तो उसके स्वार्थ का कोई प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता। करूणावश भी सृष्टि संभव नहीं है क्योंकि सृष्टि से पूर्व शरीर इन्द्रियादि के अभाव होने से दुःखाभाव होगा, फिर ईश्वर की करूणा कैसे ? करूणाभाव तो दूसरों के दुःखों के निवारण की इच्छा करूणा से सृष्टि मानने पर उसे सभीको सुखी ही उत्पन्न करना चाहिए, दुःखी नहीं। अतः अचेतन प्रकृति को स्वतः प्रवृत्ति मानना ही उचित है।

वृत्तिकार अनिरूद्ध ने ईश्वर कर्तृत्व का खण्डन करते हुए कहा है कि ईश्वर की सिद्धि करने वाला कोई प्रमाण नहीं है। ईश्वर के जगत कर्तृत्व में निमित्त कारणता का खण्डन करते हुए वे कहते हैं कि ईश्वर के न तो सशरीरी होने पर और न अशरीरी होने पर सृष्टि संभव है। यदि ईश्वर स्वतंत्र होकर भी जीवों के कर्मानुसार उनकी सृष्टि करता है तो उसकी आवश्यकता ही क्या है ? क्योंकि वह कार्य कर्म से ही हो जायगा। किन्तु राग के अभाव में वह सृष्टि कर ही नहीं सकता। इसी तरह अन्य तर्कों के द्वारा अनिरूद्ध सांख्य सूत्रों की वृत्ति करते हुए सांख्य को अतीश्वरवादी सिद्ध करते हैं।

समालोचना

यहाँ यह टिप्पणी करना अपेक्षित है कि कम से कम सांख्यकारिका में कहीं ऐसा संकेत नहीं है कि ईश्वरकृष्ण

www.ignited.in

निरीखरवादी थे। इसके विपरीत, परमात्मा ईश्वर के सत्ता की स्वीकृति तथा महत्त्व का उल्लेख अवश्य है। ईश्वर कृष्ण स्पष्ट रूप से स्वयं को उस प्राचीन सांख्य परम्परा से जोड़ते हैं। जिसके बारे में निर्विवादतः यह कहा जा सकता है कि वह असंदिग्धतः वेदोक्त त्रैतवाद (अनादि तत्त्वों के त्रैत) स्वीकार करती है। यह भी भारतीय इतिहास की प्राचीन परम्परा है कि सांख्य संस्थापक महर्षि कपिल हैं। वार्षगण्य और उनके दो एक अनुयायी अवश्य निरीश्वरवादी कहे जा सकते हैं। लेकिन इन्हें सांख्य दर्शन के प्रतिनिधि के रूप में पारम्परिक महत्ता प्राप्त नहीं हुई। किन कारणों से कारिकाओं में भाष्यकारों को परमात्मा के दर्शन् नहीं हुए यह ऐतिहासिक और मनोवैज्ञानिक शोध का विषय है। लेकिन यह तथ्य बिल्कुल सुनिश्चित है कि ईश्वरकृष्ण कपिल - सांख्य की परम्परा में ही स्वयं को रखते थे। ऐसे में हमें यह अधिकार प्राप्त नहीं है कि हम उन्हें प्राचीन सांख्य की परम्परा से पृथक रखें।

प्राचीन भारतीय समाज में, विद्वतवर्ग में ईश्वर को न मानना सम्मानजनक नहीं रहा है और सांख्य अत्यन्त सम्मानित दर्शन रहा है। माठरकृत्ति सांख्यकारिका की उपलब्ध टीकाओं में प्राचीनतम मानी जाती है। 17 वीं कारिका की वृत्ति में उन्होंने स्पष्टतः अधिष्ठाता के रूप में "परमात्मा" को ही स्वीकार किया बाद के, भाष्यकारों ने इसका क्यों अनुकरण नहीं किया - यह कहना तो कठिन है, पर एक बात स्पष्ट है कि आचार्य माठर के समय सांख्य दर्शन परमारमवादी अवश्य रहा होगा। अन्यथा निरीश्वरवादी दर्शन की रचना पर वृत्ति में परमात्मा की स्वीकृति की असंगतता को माठर भी ध्यान में अवश्य रखते। उपर्युक्त मान्यताओं के आधार पर हमें कोई कारण नहीं दीखता कि हम ईश्वर कृष्ण को निरीश्वरवादी मानें।

सांख्यकारिका का दर्शन जैसे हमने समझा है, उसे हम इस प्रकार रखते हैं। तीन तत्त्व जानने योग्य है व्यक्त, अव्यक्त और ज्ञ। इन्हें जानकर समुचित तत्त्वाभास द्वारा दुःखों से अप्रभावित हुआ जा सकता है। उक्त तीन तत्त्वों का उल्लेख प्रतिज्ञा रूप् में कारिका - 2 में किया गया है (व्यक्ताव्यक्तज्ञविज्ञानात)। बिना किसी विशेषण या उपसर्ग के "ज्ञ" पद का उपयोग "सर्वज्ञत्व" के अर्थ में ही हो सकता है। वह परमात्मा ही है। जिस तरह ऊर्जा को उसके प्रभाव तथा कार्य द्वारा जाना जाता है, अनुभव किया जाता है उसी तरह सृष्टि के प्रत्येक कण में, धरना में परमात्मा की अनुभूति होती है। लेकिन ज्ञान और अनुभव का यह क्षेत्र पूर्णतः व्यक्तिगत होने से इस पर चर्चा बिना समकक्ष अनुभव के नहीं की जा सकती तथा परमात्मा के दर्शन या अनुभव कराना शास्त्र प्रयोजन भी नहीं है। शास्त्र का प्रयोजन तो सृष्टि और स्वयं को समझने में सहायता करता है। शेष तो स्वयमेव होने लगता है। जिन लक्षणों से युक्त परमात्मा की चर्चा की गई है उन लक्षणों की चर्चा लगभग सभी परमात्मावादी दर्शनों में प्रचलित है। केवल अद्वैत वेदान्त इसका अपवाद है।

प्रकृति अचेतन है। अतः बिना किसी चेतन सत्ता की प्रेरणा अथवा नियंत्रण के क्रियाशील नहीं होती। जीवात्मा अल्पशक्तिवाला, अल्पज्ञ और स्वरूपतः भोक्ता होने से प्रकृति का नियन्ता नहीं हो सकता। वह चेतन तत्त्व परमात्मा ही हो सकता है। चूकि प्रकृति से परमात्मा अप्रभावित रहकर ही उसे प्रेरणा देता है, इसलिए साक्षित्व और कैवल्य इसी एकांगी सम्बन्ध के लिए प्रयुक्त पद है। इन शब्दों से परमात्मा "क्या है" यह समझ पाना महत्त्वपूर्ण नहीं है बल्कि यह समझना कि परमात्मा प्रकृति का प्रेरक होते हुए भी स्वयं सर्वथा उससे अप्रभावित रहता है। इसके विपरीत, जीवात्मा प्रकृति में मुग्ध होता है।

यदि परमात्मा अचेतन प्रकृति को प्रकाशित करता है, प्रेरणा देता है तो उसे अकत्ता क्यों कहा गया ? संभवतः इसलिए कि "कत्ता" कहते ही साध्य, उदेश्य प्रयोजन आदि की बात उठती हैं। परमात्मा में कोई अभाव नहंी है। अतः उसका "कत्ता" होना युक्ति संगत नहीं है। प्रेरणा देना परमात्मा का स्वरूप है। वह निरन्तर प्रकृति को प्रेरित करता रहता है। इसलिए अनादि है। इसका अन्त होगा - यह भी अकल्पनीय है, यहाँ तक कि प्रभय काल में भी। अपने स्वरूप को समझकर, प्रकृति को जानकर, सृष्टि रहस्य को सुलझाकर उससे तटस्थ होने का अभ्यास करने का मार्ग दिखाना ही कारिकाओं का उद्देश्य था। अतः परमात्मा के स्वरूप की विस्तृत चर्चा अपेक्षित नहीं थी। इसके अतिरिक्त 11, 18, 19 तथा कुछ सीमा तक कारिका 20 भी परमात्मा का प्रतिपादन करते हैं। अतः इसे अपार्याप्त नहीं मानना चाहिए।

उपसंहार

निष्कर्षतः हम कहना चाहते हैं कि सांख्य कारिका में तीन अनादि तत्त्वों को माना गया है - प्रकृति परमात्मा तथा जीवात्मा। इस अर्थ में वह वेदों के समान त्रैतवादी है। जड़ - चेतन वर्ग भेद से वह द्वैतवादी कहा जा सकता है। चूँकि सांख्यकारिका भी ईश्वरवादी है, इसलिए सांख्य दर्शन का सेश्वर - निरीश्वर विभाजन उचित नहीं है। हमारे इस निष्कर्ष से संभवतः विद्वानों को आपत्तिः होगी। हमें भी इसमें कुछ खामियाँ प्रतीत अवश्य हुई है। एक लेख में सीमा स्वतः आ जाती है, इसलिए हमने संभावित खामियों की चर्चा नहीं की। लेकिन समस्त सांख्य विशेषज्ञों से विनम्र निवेदन है कि आलोचना और आपत्ति मार्ग दर्शन के रूप में विस्तार में

अवश्य देने का कष्ट करें। परवर्ती सांख्य दर्शन जिसका प्रतिनिधित्व विज्ञानभिक्ष करते हैं अपने सांख्य - प्रवचन - भाष्य में उन्होंने सांख्य शास्त्र के उपदेशक कपिल मुनि को "ईश्वर का अवतार" तथा "ईश्वर को मोक्षप्रदाता" बतलाया है। इस तरह उन्होंने सांख्य की निरीश्वर वादी - परम्परा को नया मोड़ दिया और कहा कि ईश्वर की सिद्धि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से न होने के कारण उसका अभाव नहीं माना जा सकता। इसलिए सांख्य सूत्र में "ईश्वर सिद्धेः" कहा है, "ईश्वराभावाद नहीं है। अर्थात ईश्वर को सिद्ध नहीं किया जा सकता न कि ईश्वर का अनभाय है। डॉ. उर्मिला चतुर्वेदी ने सांख्य दर्शन और विज्ञान मिक्ष नामक शोध प्रबन्ध में विज्ञान मिक्ष का पक्ष लेते हुए सांख्य को ईश्वरवादी सिद्ध किया है। अतः परवर्ती कारण में सांख्य दर्शन ने ईश्वरकर्तत्व को अपने चिन्तन में प्रमुखता देकर सेश्वर सांख्या का ही परिचय दिया है। वस्तुतः परवर्तीकाल में चार्वाक को छोड़कर जब बौद्ध, जैन तथा मीमांसा जैसे मूलतः अनीश्वरवादी दर्शन भी किसी - न - किसी रूप में ईश्वर वादी बन गए तो सांख्य का निरीश्वरवादी स्वरूप को स्वीकार करना उचित नहीं है। इनका ईश्वर वैसा नहीं है जैसा कि आस्तिक तथा ईश्वरवादी दर्शन ईश्वर का स्वरूप निर्धारित करता है, पर उन्हें सेश्वर मानने में आपत्ति करना अनुचित होगा।

सन्दर्भ सूची

1. क्लेशकर्म वियाकारायैरपरामृष्टः पुरूष विशेष: ईश्वर ।

   - योगसूत्र, 1, 24

2. सांख्यकारीका, 57

3. अनेकान्त, वर्ष 45 कि० 3,पृ.14.

4. तस्माद्युक्तमेतत्पुरूष विमोसार्था प्रकृर्तेः प्रवृत्तिर्न चैतन्यप्रसंग इति। युक्ति० 57

5. अत्र सांख्याचार्य आहुः निर्गुणं ईश्वरः मगुणानां लोकानां तास्मादुत्पत्तिप्युक्तेति।गौड.० 61

6. सांख्य तत्व कोमुदी, 57

7. यदीश्वरसिद्वौ प्रमाणमणित, तदा तत्प्रत्पक्ष चिन्ता उपपधते। तदेव तु नामित्ता अनि०, 1/ 92 तथा 5/10-11

8. अनि.० 1/92

9. सांख्य प्रज्ञा, पृ. 10

10. सांख्यकारीका - 2

11. नारायणः कंपिलमूर्ती। सां० प्र० भाप, मांगलाचरण 2

12. दीयतां मोसदो दहिः। वही, 6.

13. सांख्यसूत्र, 1/92

14. सां० प्र० भा० 1/92

Corresponding Author

Dr. Sarita Kumari*